'ब्रह्म सत्यं जगत् स्फूर्तिः, जीवनं सत्यशोधनम्'

विनोबा-प्रवचन

(सप्ताह में तीन बार—मंगल, गुरु और शनि को प्रकाशित)

वर्ष ३, अंक २४ | वाराणसी, मंगलवार, २४ फरवरी, १९५९ | पचीस रुपया वार्षिक

मीरा के मन्दिर में

चित्तौड़गढ़ (राज०) ९-२-'५९

मीरा के जीवन की अदम्य प्रेरणा

[मीरा राजस्थान की महान भक्त हो गयी है। मीरा के गीत गाँव-गाँव और घर-घर में फैले हुए हैं। विनोबाजी इन गीतों में न केवल रस ही लेते हैं, बल्कि उनका मनोवैज्ञानिक विश्लेषण भी करते हैं। चित्तौड़गढ़ में मीरा का प्रसिद्ध मन्दिर है। विनोबाजी जब अपनी यात्रा के बीच यहाँ आये तो सहज ही इस मन्दिर में जाने की भी उन्हें प्रेरणा हुई। उन्होंने नगर के अन्य लोगों को भी मन्दिर में आने के लिए कहा। मन्दिर पहुँचने के बाद छात्राओं ने मीरा के भजन गाये। उसके बाद विनोबाजी ने मीरा की तथा अन्य भक्तों की परम्परा का विश्लेषण करते हुए यह भाषण दिया। —सं०]

वासनाएँ तीन प्रकार की होती हैं: (१) पुत्र-वासना, (२) वित्त-वासना और (३) लोक-वासना। इन तीनों वासनाओं का परित्याग करने से जीवन में भक्ति का समग्र रूप अभिव्यक्त होता है। भक्ति के मार्ग पर अनेकों लोग अग्रसर हुए हैं। अनेकों व्यक्तियों ने पुत्र-वासना छोड़ी, वित्त-वासना भी छोड़ी, परन्तु लोक-वासना छोड़ने में वे कृतकार्य नहीं हो सके। 'लोग हमें भला कहें, सर्वत्र हमारी कीर्ति हो, सभी हमें इज्जत दें' यह एक बहुत बड़ी वासना है। सामान्य मनुष्य को इससे कर्तव्य की प्रेरणा मिलती है और वही उसके लिए पृष्ठबल भी सिद्ध होता है, किन्तु परमेश्वर की भक्ति में वह मनुष्य का बल नहीं, दुर्बलता है। इस दुर्बलता पर जिन्होंने विजय प्राप्त कर ली, वे भक्ति की कसौटी पर खरे उतर गये। उनकी भक्ति-साधना सफल हो गयी।

मीरा महान भक्त थी

मीराबाई का नाम सारे भारत में मशहूर होने के साथ-साथ विश्व-इतिहास में भी अपना एक विशिष्ट स्थान रखता है। हिन्दुस्तान में मीराबाई की कीर्ति की बराबरी कबीर और तुलसीदास करते हों तो करते हों, बाकी और कोई नहीं करता है। जहाँ हम मध्य-युगीन सन्तों की बात करते हैं, वहाँ कबीर और तुलसीदास को जो लोक-कीर्ति मिली है, वह सम्भवतः अन्य किसीको उपलब्ध नहीं हो सकी है। जिस कोटि में वे दो थे, उसी कोटि में आज मीराबाई का नाम आ गया है। इन तीनों व्यक्तियों को अपने जमाने में ठीक तरह से पहचाना नहीं गया। जगह-जगह उन्हें बेइज्जती सहन करनी पड़ी। उन्होंने सब कुछ सहकर भी अपनी स्वतन्त्र भावनाओं को अक्षुण्ण रखा। वे बराबर अपने युग की विपरीत परिस्थितियों में अपना पथ स्वयं बनाते रहे। उनका धैर्य डिगा नहीं। वे अपने धैर्य से विचलित नहीं हुए।

तुलसीदासजी काशी में मारे-मारे फिरे। एक घाट से दूसरे घाट तक भटकते थे। उस युग के वैष्णवों ने उन्हें तिरस्कृत किया। अन्त में जिस घाट पर कोई नहीं था। उस घाट पर आकर वे रहे। उस घाट का नाम है 'अस्सी घाट'। वह सम्भवतः उनके बाद में ही बनाया गया है। उसी घाट पर तुलसीदासजी रहे और वहीं उनकी मृत्यु हुई।

कबीर की जीवनी तो बहुत प्रसिद्ध है। उन्हें अपनी जिन्दगी में कितनी बेइज्जती बरदाश्त करनी पड़ी, यह आप सभीसे छिपा नहीं है।

मीराबाई को भी वही स्थिति थी। वह अपने आप को भगवान की जन्म-जन्म की दासी समझती थी। उसे दूसरे लोगों ने अन्य किसी की दासी बनाना चाहा तो उसने कह दिया 'मेरे तो मुख राम नाम दूसरो न कोई....', मुखड़ानी माया लागी रे, रांड़वाने भय टालो रे'। इसपर वह दोनों कुलों से तिरस्कृत कर दी गयी। सभी लोग उसका उपहास करने लगे।

भक्ति के दो प्रकार

आज मीराबाई नहीं है। उसके द्वारा रचित गाने अभी भी चलते हैं। बड़े-बड़े दरबारों में, मजलिसों में एवं जलसों में मीराबाई के गाने गाये जाते हैं। अच्छे-अच्छे संगीतज्ञों को विविध रागिनियों में, उसके गाने-गाने में धन्यता महसूस होती है। वे इन गानों के बल पर दुनिया को रिझाते हैं, लेकिन मीराबाई ने वे गाने लोकरंजन के लिए नहीं बनाये थे। मीराबाई एक बगावत करनेवाली भक्त थी। भक्ति दो प्रकार की होती है; एक मर्यादा-भक्ति और दूसरी पुष्ट भक्ति। मर्यादा-भक्ति में लोक-व्यवहार को प्रमुखता मिलती है तथा पुष्ट भक्ति में अन्तःप्रेरणा को। अन्तःप्रेरणा पर आधारित पुष्ट भक्ति में मर्यादाएँ टूट जाती हैं।

'अब तो बात फैल गयी, जाने सब कोई।
मीरा प्रभु लगन लागी, होनी से होई॥'

इस प्रकार की मर्यादा भंग करनेवाली मीराबाई की भक्ति थी। उसके दोनों कुल पराक्रमी थे, धर्मरक्षक थे और भगवान की भक्ति करनेवाले थे। उनकी भक्ति में मर्यादा का प्राधान्य था। 'सर्वधर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज' सभी धर्मों को छोड़कर मेरी शरण में आओ, ऐसी वह भक्ति थी। वह भक्ति मीरा ने नहीं की।

स्त्रियों में पुष्ट भक्ति करनेवालों में से दो-तीन नाम मेरे स्मरण में हैं। तमिलनाड़ में 'आंडाल' महाराष्ट्र में 'जनाबाई' व 'मुक्ताबाई' और इधर 'मीराबाई'। अन्य और भी कोई नाम हों तो अभी मुझे याद नहीं है। मीरा ने कहा है कि 'मैं तो जन्म-जन्म की हरि की दासी हूँ। मुझे और कोई भी दासी नहीं बना सकता' यह जो आजादी की मस्ती है, वह परमेश्वर के अनन्यशरणभक्त को ही प्राप्त होती है। अपनी भक्ति से मीराबाई उस श्रेणी में पहुँच गयी, जिस श्रेणी में माता रुक्मिणी थी। जब रुक्मिणीजी की शादी किसी दूसरे से करने का सोचा जाने लगा तो उसने भगवान को पत्र लिखा। वह पत्र भागवत में है। दुनिया के पत्र-साहित्य में शायद वह प्रथम पत्र है। उसमें रुक्मिणीजी ने लिखा है 'मैं और किसीकी दासी नहीं बन सकती हूँ। मुझे भगवान की ही दासी बनना है, उसके लिए चाहे सौ जनम ही क्यों न बिताने पड़ें? सौ-सौ जनमों तक व्रतों से प्राणों को कृश करूँगी, भोग छोड़ूँगी, प्राणों की आहुति दूँगी, लेकिन तुम्हारे ही पास आऊँगी, तुम्हारे ही चरणों में आश्रय लूँगी। दूसरे के साथ मैं हर्गिज शादी नहीं कर सकती।'

हमारे लोग दो-चार साल काम करते हैं, फिर पूछते हैं कि 'अब कहाँ तक त्याग करना है? काफी त्याग किया, अब तो जरा घर-बार देखना होगा। बाबा कहता था और हमारा भी अनुमान था कि यह काम '५७ तक पूरा हो जायगा, लेकिन वैसा नहीं हुआ। यह काम तो अभी भी लंबा होता जा रहा है। कब तक ऐसे चलायें?' लेकिन इधर रुक्मिणी क्या कह रही हैं? सौ-सौ जनम तक प्राणोत्सर्ग करती रहूँगी, लेकिन तुझे प्राप्त करके ही रहूँगी। मैं कह नहीं सकता कि मुझे कितनी ताकत उसके इस कथन से मिलती है। 'जह्याम्यसून व्रतकृशान् शतजन्मभिः स्यात्' वही चीज है, यह 'जनम-जनम की दासी'। रुक्मिणीजी की ही हैसियत मीराबाई को प्राप्त हुई थी। मीरा की भक्ति कितनी महान है? उसने विद्रोह के साथ भक्ति का झण्डा उठाये रखा, इसलिए भी वह महानोत्तर है।

धर्म-व्यवस्था और लोक-व्यवस्था

कल एक जैन भाई ने पूछा था कि ब्रह्मचर्य पालन करने के लिए मर्यादाएँ बनायी गयी हैं, उनका निर्वाह कैसे किया जाय? मैंने उसे कहा कि अब ब्रह्मचर्य तो चलेगा, किन्तु मर्यादाएँ नहीं चलेंगी। पहले जमीन ज्यादा थी और लोक-संख्या कम थी तो सन्तानोत्पत्ति की प्रेरणा बाहर से ज्यादा थी। आज हालत ऐसी नहीं है। इसलिए ब्रह्मचर्य की प्रेरणा बहुत मिलेगी, किन्तु मर्यादाएँ नहीं टिकेंगी। साधारण मनुष्य के लिए मर्यादाएँ आवश्यक होती हैं, वे रहेंगी, परन्तु ब्रह्मचर्य नैष्ठिक ही रहेगा। पुराना जमाना बदल गया। नया आ रहा है। इसमें नीतिशास्त्र और लोकनीति-शास्त्र में भी परिवर्तन हो जायगा। नीतिशास्त्र से मेरा मतलब है धर्म-विचार और लोकनीति-शास्त्र याने लोक-व्यवस्था पद्धति। मीरा और प्रताप अब धर्म और लोक-व्यवस्था के प्रतिनिधि का काम देंगे।

उस जमाने में अकबर केन्द्रित सुराज्य का प्रतिनिधि था और राणाप्रताप विकेन्द्रित स्वराज्य के प्रतिनिधि थे। इसी कारण स्वराज्य-आन्दोलन में राणाप्रताप का नाम खूब चला। रविन्द्रनाथ से लेकर सामान्य कवियों ने उनपर कविताएँ लिखीं। इसी तरह शिवाजी भी विकेन्द्रित स्वराज्य के प्रतीक थे। चार सौ वर्षों में जो लोग अतीत के पीछे रहे, वे लोग आज की प्रेरणा हैं। तमिलनाड़ में मुझे शिवाजी पर लिखी हुई एक सुन्दर कविता पढ़ने को मिली, तब मैं आश्चर्य-चकित ही रह गया। राणा प्रताप और शिवाजी नहीं जानते होंगे कि वे किस बात के प्रतिनिधि हैं! उन्हें कौन सी प्रेरणा घुमा रही है? मनुष्य आखिर है कौन? तिनके हवा के साथ उड़ते हैं, वैसे ही मनुष्य युग की हवा में उड़ते हैं। वे क्या हैं? उन्हें कहाँ जाना है? यह उन्हें मालूम नहीं रहता! हवा जानती है कि उन्हें कहाँ जाना है? आनेवाले युग में अकबर के नमूने की नहीं, लेकिन राणाप्रताप के नमूने की लोकनीति चलेगी। स्थानीय पराक्रम को बढ़ावा मिलेगा। वैसे ही मैं मानता हूँ कि भावी युग में पुष्ट भक्ति होगी। मर्यादित भक्ति नहीं रहेगी।

अभी जो मीरा का महल आपने दिखाया, सच तो यह है कि उसमें मीरा को कैद रखा गया था। जब लोक-लाज छोड़कर वह नाचने लगी तो राणा ने उसे इस अलग मकान में रख दिया और कहा कि 'हमारे घर में तुम्हारा यह ढंग नहीं चलेगा।'

उस जमाने की कहानी मैं दुहराना नहीं चाहता हूँ। आज जिस हालत में यह महल है, वह कोई भी राजकन्या के रहने लायक नहीं है। इसे एक प्रकार से अलग सा ही बना रखा है। अलगपन के कारण जेल ही था, पर इसे महल समझकर ही यहाँ मीराबाई रहती थी। यहाँ वह अपने आपको जिनकी दासी मानती, उनकी आजादी पूर्वक भक्ति करती थी। उसकी आत्मा को कोई गुलाम नहीं बना सका था।

वह आत्मा आज भी मेरे जैसे नाचीज भक्त को आजादी की प्रेरणा दे रही है। मीरा के पद मुझे रह-रह कर प्रेरणा देते हैं। मीरा जनम-जनम की दासी होकर भी साधना करती है, इससे मुझे बड़ी शक्ति मिलती है। मैं सतत सेवा में लीन रहने की प्रेरणा पाता हूँ।

मीरा की भक्ति के इस देश में भूमि की समस्या हल करनी है। प्रेम, करुणा और भक्ति के जरिये भूमि की समस्या हल होगी ही। पर हमारे सामने आज सबसे बड़ी कठिनाई यह है कि लोगों में से आत्म-विश्वास उठ गया है। भक्ति का स्थान गौण हो गया है। सरकार की प्रधानता हो गयी है। सभी लोग शासन-मुखापेक्षी बन जायँ, इससे अधिक गतिरोध क्या हो सकता है? इसीलिए मैं बराबर प्रार्थना करता हूँ कि 'हे देव! मुझे भुक्ति नहीं, मुक्ति नहीं—भक्ति दे! सिद्धि नहीं- समाधि नहीं—सेवा दे।'

(बोलते-बोलते भावविह्वल होकर विनोबाजी रुक गये। फिर धीरे-धीरे अपने आपको संयमित करते हुए, रुंधे हुए कंठों से उन्होंने कहना प्रारंभ किया।)

आज हम लोग मीरा के मंदिर में आये हैं। दर्शन किये हैं। भक्ति-भाव से उसके भजन भी गाये हैं, इसलिए अब आप और हम मिलकर यह प्रतिज्ञा भी करें कि जब तक ग्राम-स्वराज्य की स्थापना नहीं होती है, तब तक हम चैन नहीं लेंगे, भोग-विलास नहीं करेंगे और हम अपनी सारी भक्ति तथा तन्मयता ग्राम-स्वराज्य की स्थापना करने में लगा देंगे।

सरकारी कर्मचारियों के साथ

राष्ट्र-विकास के सिद्धान्तों की सही समझ

हम जहाँ जाते हैं, वहाँ सरकारी कर्मचारियों की सभा होती है, उनके समक्ष हमें अपने विचार प्रस्तुत करने का अवसर मिलता है, यह आनन्द की बात है।

हम लोक-शक्ति निर्माण करना चाहते हैं। गाँववाले लोग अपने पाँव पर खड़े हो जायँ। वे अपने पराक्रम से अपने भाग्य का निर्माण करें, ऐसी हमारी अपेक्षा है। गाँव के लोग अपनी शक्ति से अपना काम करें, सहयोग करना सरकारी सेवकों का काम है।

स्वराज्य-प्राप्ति के बाद लोगों की कर्तृत्व-शक्ति क्षीण हो गयी है। पहले लोग अपने आप काम कर लेते थे, लेकिन अब जब कि अपनी सरकार हो गयी है तो वैसा नहीं करते हैं। सभी लोग हर काम के लिए सरकार-सापेक्ष हो गये हैं।

सरकार में या जनता के बीच ?

लोगों की कर्तृत्व-शक्ति क्षीण करनेवाले अनेक कारणों में से एक कारण है—आज के ये राजनैतिक पक्ष। राजनैतिक पक्ष-वालों का पूरा विश्वास सत्ता पर है। इसलिए आज पार्टियों के मुख्य-मुख्य लोग सरकार में शामिल हो गये हैं और जो लोग बाहर रह गये हैं, वे मत्सरी बन गये। वे सत्ताप्राप्त लोगों से ईर्ष्या करने लग गये हैं। दूसरे दलों के जो नेता हैं, वे सत्ताप्राप्त करने के लिए अवसर की ताक लगाये बैठे हैं। जिसे हम रचनात्मक कार्य कहते हैं और जिसके बलपर हम जनता में आत्म-प्रत्यय पैदा करना चाहते हैं, वैसा काम करनेवाले लोग अब सार्व-जनिक क्षेत्र में नहीं रह गये हैं। इससे धीरे-धीरे लोग समझने लग गये हैं कि स्वराज्य-प्राप्ति के बाद इन दस वर्षों में जितना काम होना चाहिए था, वह नहीं हुआ है। देहात के लोग बिलकुल सीधे-साधे हैं। उन्हें ज्ञात नहीं है कि केवल सरकारी प्रयत्नों से सारा काम नहीं हो सकता। निर्माण-कार्य की सफलता के लिए जनता का जागृत होना आवश्यक है। लोक-जागृति के बिना कोई भी काम गहराई में नहीं जा सकता।

आप लोग सरकार की ओर से लोगों की सेवा के लिए नियुक्त किये गये हैं। इसलिए आपका कर्त्तव्य है कि लोगों को अपनी शक्ति का भान करायें। यह काम केवल शब्दों से नहीं हो सकता, उसके लिए आपको जनता में जाना होगा, वे क्या करते हैं, इसका दर्शन करना होगा, उनका विश्वास प्राप्त करना होगा और यथाशक्ति सहयोग भी करना होगा।

छोटी योजनाएँ या बड़ी योजनाएँ

छोटी-छोटी योजनाएँ हम स्वयं अपनी शक्ति से करें तो हिन्दुस्तान जितना प्रगति कर सकेगा, उतना बड़ी-बड़ी योजनाओं के लाद लेने से नहीं कर सकेगा। भगवान चाहे तो हम बड़े-बड़े काम भी कर सकते हैं, लेकिन छोटे कामों में प्रवीण हुए बिना बड़े काम किसी भी तरह नहीं कर सकेंगे। इसलिए छोटे कामों की बुनियाद पर हम बड़े कामों क खड़ा करें।

गाँव की सफाई की ही बात लीजिये ! बाहरी मदद की अपेक्षा रखे बिना ही सारे लोग सम्मिलित होते हैं, सफाई करते हैं, मल-मूत्र को गड्ढे में पूर देते हैं और खाद तैयार कर लेते हैं तो दो तरह का काम हो जायगा। एक तो उन्हें खाद उपलब्ध होगी तथा वे बीमारी से बच जायँगे एवं यह भी समझ जायँगे कि हममें भी कुछ करने की क्षमता है।

बड़ी योजनाएँ ऊपर से लादने की अपेक्षा आप उन्हें सहज रूप से कर सकें, ऐसे कामों के लिए प्रोत्साहित करें तो स्वतन्त्र कर्तृत्व जगाने में महत्त्वपूर्ण योग हो सकता है। जो काम वे नहीं कर सकते, वैसे काम उनपर आरोपित कर देने से लोग अधिक परावलंबी बनते हैं। इसलिए आपको उनके पास पहुँच कर उन्हें अपने पुरुषार्थ की प्रतीति करानी चाहिए। वह आपके लिए तालीम देने का अच्छा माध्यम भी बन जाता है। जैसे कि आप सफाई के कार्यक्रम में शरीक हुए तो उन्हें सफाई-विज्ञान से अवगत करा सकते हैं। खाद बनाने की पद्धति, 'सोकपीट' बनाने का ढंग और स्वास्थ्य की सर्वसुलभ दृष्टि बनाने का उससे अच्छा अवसर क्या हो सकता है ? प्रारम्भ में आप योग देते रहें तो बाद में प्रत्यक्ष लाभ देखकर गाँववाले स्वयं उस काम को उठा लेंगे।

दूसरी बात मैं पंचायतों के बारे में कहना चाहता हूँ। आज गाँवों में पंचायतों से लाभ की अपेक्षा हानि ही अधिक हो रही है। अब गाँववालों को सर्वसम्मति से कारोबार चलाने के बारे में समझाना चाहिए। 'मेजॉरिटी' से काम करने की प्रक्रिया में आज गाँवों में अनेकों दल खड़े हो गये हैं। किसी भी कारण से हो, गाँव में दल हो जाने से गाँवों की तरक्की नहीं हो सकती। तरक्की की प्रथम शर्त है 'गाँवों की एकता'। चुनाव आदि कई कारणों से गाँव-गाँव में झगड़े होते रहते हैं। इससे कहीं एकता नहीं बनती। एकता के अभाव में निर्माण की कोई योजना सफल नहीं हो सकती। इसलिए गाँवों में एकमत से काम होना जरूरी है और वह एकमत कैसे बने, यह आपको देखना चाहिए।

आप सरकारी सेवक तो हैं ही, किन्तु अब आपको लोक-सेवक बनने का प्रयत्न करना चाहिए। लोक-सेवक बने बिना जनता आपके प्रति विश्वसित नहीं रहेगी। इसलिए आपको भूदान, ग्रामदान में सक्रिय सहयोग की सम्मति के तौर पर अपनी आय का एक हिस्सा मुझे देना चाहिए।

सर्वोदय-योजना और विकास-योजना

प्रश्नः—सर्वोदय और विकास-योजना के कार्यक्रमों का सामञ्जस्य कहाँ, कैसे, किस तरह होना चाहिए ?

विनोबाजी :—विकास-योजना सर्वोदय के लिए ही है। सर्वोदय यानी सबका भला ! सरकारी योजनाओं में जो सबसे नीचे हैं, गिरे हुए हैं, विपन्न हैं, उन्हें ऊपर उठाने की प्रधानता दी जानी चाहिए। आज वैसा नहीं है। इन दिनों सरकार की ओर से जो मदद दी जा रही है, वह अधिकांश उन लोगों को दी जाती है, जिन्हें मदद की उतनी आवश्यकता नहीं है, जितनी कि दूसरे गरीबों को है, जो उस मदद को पाने में असमर्थ हैं। इसलिए आपको जरूरतमन्द लोगों की तलाश करनी चाहिए। सम्भव है, उस निमित्त आपको भी अपने लिबास में परिवर्त्तन करना पड़े ! यह बाबूगिरी की वेशभूषा त्यागकर सीधी-सादी वेश-भूषा का इस्तेमाल करना चाहिए।

भगवान कृष्ण गोकुल में ग्वाल-बालों के साथ रहते थे। उनकी सेवा करते थे। तत्सम वर्तन करके ही वे उनके दिलों को जीत सके थे—वैसे ही विकास-योजनावालों के लिए गाँव के लोगों को अपने से भिन्नता प्रतीत नहीं होनी चाहिए। गांधीजी ने सबको

खादी-पोशाक सुझाई थी, उसके पीछे भी यही तथ्य था। आप लोग खादी पहनें तो गाँववालों को लगेगा कि ये हमारे में से ही एक हैं। लोक-जीवन से जरा भी भिन्नता दिखलाई देने पर वे आपके सामने दिल खोलकर बातें नहीं कर सकेंगे।

गाँववालों के मन में अपना स्थान बनाने के लिए उनपर प्रेमाक्रमण करना होगा। अपने सारे व्यवहार में उन्हें न भय मालूम होना चाहिए और न अति आदर ही। आदर से भी लोग खुलते नहीं हैं। लोहचुम्बक मिट्टी में से लोह कणों को आकृष्ट कर लेता है, वैसे ही आपको भी गरीबों को आकृष्ट करना चाहिए। भक्त भगवान के दर्शन करने के लिए मन्दिर जाते हैं। मन्दिर में दर्शन किये बिना वे किसीसे वार्तालाप भी नहीं करते, ठीक उसी तरह आपको भी दरिद्रनारायण के पास पहुँचना है। वे हमारे पास नहीं आयेंगे, हमें ही उनके पास जाना होगा। बीच में गतिरोध होगा। कई पर्दे होंगे, किन्तु हमें सबको लाँघते हुए यह तलाश करनी होगी कि गाँव में दीन-दुःखी, दलित-पीड़ित-परित्यक्त कौन है? कौन है ऐसा, जिसे पूछनेवाला कोई भी न हो? यदि कोई हो तो हमारी सेवा उसीके लिए समर्पित होनी चाहिए। उसे आवश्यक काम मिले, ऐसा प्रयत्न करना चाहिए।

कुछ लोग ऐसा मानते हैं कि जनता के साथ घुल-मिल जाने से काम में प्रभावशालिता नहीं रहती है, इसलिए लोगों से जरा अलग रहकर रोब दिखाते रहने से काम होगा। लेकिन यह एकदम पुरानी बात है। अब इसे आदर्श मानकर आप जन-मानस में नहीं जम सकेंगे। पाकिस्तान में अयूबखाँ प्रभाव दिखा रहा है, इसे आप स्वीकार करें तो फिर आपको मिलिटरी के हाथों में शासन-सूत्र सौंपना होगा। मिलिटरी के जवानों जितना प्रभाव रखने में आप कामयाब नहीं हो सकते। पर यह बात भी अब नहीं चलेगी, अतः आपको जनता के परिचय में ही खूब आना चाहिए।

परिचय का अर्थ यह नहीं कि लोगों के साथ हम भी चरित्र-हीन बन जायँ। चारित्र्य तो हमारा ऊँचा रहना ही चाहिए, लेकिन जीवन में उनके साथ घुलमिल जाना चाहिए। अधिकारी स्वयं अपने हाथ में झाड़ू लेकर सफाई करें। हम लोग अलग रहकर गाँववालों से सफाई करवायें, इसमें कोई प्रतिष्ठा नहीं है। साथ काम करने में ही प्रतिष्ठा है, लेकिन वे जैसी गंदगी करते हैं, वैसी गंदगी हमें नहीं करनी चाहिए। जिनका चारित्र्य गिर गया है, उनके साथ हम गिरें नहीं। उन्हें उठाने की भरपूर कोशिश करें, इसीमें हमारा पुरुषार्थ है। अगर हम उन्हें ऊँचा उठाने के लिए जरा झुकेंगे नहीं तो कैसे चलेगा? बच्चे को ऊपर उठाने के लिए माँ को झुकना ही पड़ता है। वह अगर झुके बिना ही अकड़कर खड़ी रहे तो क्या बच्चे को उठा सकेगी?

'स्वराज्य-प्राप्ति से पूर्व जैसा रोब था, वह अब नहीं रह गया है। पहले अंग्रेजी में बोलते थे, अब हिन्दी में बोलने से लोगों पर जरा भी असर नहीं होता'—ऐसा जो समझते हैं, वे ठीक नहीं सोचते। सच तो यह है कि अब वैसा रोब रह ही नहीं सकता। जनता को मताधिकार दें और रोब भी दिखायें, ये दोनों चीजें एक साथ नहीं हो सकतीं! अगर आपको रोब रखना है तो मताधिकार मत दीजिये और मताधिकार देना है तो रोब रखने की कल्पना छोड़ दीजिये। मताधिकार प्राप्त करते ही लोग आपके मालिक बन गये। अब आपको उनकी इज्जत करनी होगी। नम्रभाव से सेवा करनी है। ऐसे वर्तन में शिथिलता आयेगी, ऐसा मानने का कोई कारण नहीं है और न यही मानने का कारण है कि जरा अलग रहने से हमारा अक्षुण्ण प्रभाव रह जायगा!

जनता के साथ मिलें और जनता के हितों को प्रधानता दें तो विकास-योजना का कार्यक्रम सर्वोदय-योजना के साथ सामञ्जस्य पैदा करने का प्राथमिक रूप हो जायगा। आगे फिर हमें क्रमशः कैसे बढ़ना है? क्या करना है? यह सब तो अपने आप सूझनेवाला है।

विकास-योजना की सही दिशा

प्रश्न :—क्या आपकी राय में आज की विकास-योजनाओं का कार्यक्रम ठीक है? यदि नहीं तो इसमें कौन से सुधार अपेक्षित हैं?

विनोबाजी :—गाँवों में कच्चे माल का पक्का माल बनाना ही गाँवों को विकास की ओर अग्रसर करने का पहला कार्यक्रम है। जब तक गाँवों का कच्चा माल निर्यात होता रहेगा, तब तक पक्के रास्ते बनाना आदि जितने भी काम हैं, वे सब शोषण के जरिये ही सिद्ध होते रहेंगे। जो लोग सेवा के निमित्त से गाँवों में जायँगे, वे भी उस शोषण में सहायक होंगे। इसलिए गाँव की दौलत कैसे बढ़े? ग्रामोद्योगों को कैसे विकसित किया जाय? देहात में कच्चे माल का पक्का माल बनाने में क्या कठिनाई है? इस बारे में प्रथम ध्यान देना चाहिए। इसका आयोजन आप कर सकते हैं।

जैसे शरीर में हाथ, पाँव तथा आँख का पृथक्-पृथक् रहने के बावजूद पारस्परिक सहयोग रहता है, वैसे ही हमारे उद्योगों में सहकार रहना चाहिए। आज हमारे खादी और ग्रामोद्योग का काम भी अलग-अलग चलता है। दोनों में पूरा सहयोग होना कठिन माना जाता है। दोनों के हितों में विरोध है। यह कितनी गलत बात है? मेरी आँखों के सामने पेड़ है। उसपर पके फल हैं। आँखें देखती हैं और पाँव तत्काल उधर घूम जाते हैं। नजदीक पहुँचते ही हाथ उठता है, पत्थर फेंकता है, फल गिरता और मुँह खाता है। इस समस्त प्रक्रिया में एक-दूसरे के लिए कितना सहयोग है? अगर पाँव वृक्ष की ओर चलते, लेकिन हाथ पत्थर फेंकने का कार्य न करता, फलोपलब्धि कहाँसे होती? तीनों के सहकार से ही इष्टसिद्धि होती है। इच्छा हुई, उसी क्षण तीनों को प्रेरणा होती है। तीनों अपना-अपना काम करते हैं और देखते-देखते वस्तु मुँह में चली जाती है। किन्तु कहीं ऐसा हो कि आँख का दर्शन पाँव तक पहुँचते-पहुँचते चार महीने बीत जायँ तथा पाँव का आदेश हाथों को मिलते-मिलते महीनों लग जायँ तो आम बंदर खा जायँगे और आपकी योजना चलती ही रहेगी। वैसी ही आज की हालत है।

सरकारी विभागों में शीघ्र सहयोग नहीं होता है। मैंने खादीवालों एवं नेताओं से कहा था कि इन सब लोगों का सहयोग होना चाहिए। विकास-योजनावालों, खादी-बोर्डवालों तथा अन्यान्य सेवकों को चाहिए कि वे अपना निरीक्षण-परीक्षण करते हुए कार्य करें। एक रास्ते के बारे में सोचेगा, दूसरा खादी की तरक्की की योजनाएँ बनायेगा और तीसरा खेती के अनुसन्धान की कल्पनाएँ ही करता रहेगा तो कोई काम नहीं हो सकेगा। आज राष्ट्र में जो निर्माण-कार्य सफल नहीं हो रहा है, उसका भी मुख्य कारण पारस्परिक सहयोग का अभाव ही है। इसलिए इस दूरी की खाई को हम पाट सकें तो विकास का ठोस काम हो सकेगा।

विकास-अधिकारियों का सहयोग

प्रश्न :—ग्रामदानी गाँवों में विकास-अधिकारी क्या योग दे सकते हैं ?

विनोबाजी :—विकास-अधिकारियों को ग्रामदानी गाँव में पहुँचकर लोगों को आश्वासन देना चाहिए। उन्हें समझाना चाहिए कि आपने बहुत अच्छा कार्य किया है। आजकल जैसे ही लोग ग्रामदान की घोषणा करते हैं, वैसे ही आस-पासवाले उन्हें धमकाने लगते हैं कि अब तुम्हारा कैसे चलेगा ? तुम लोगों ने स्वामित्व-विसर्जन कर दिया तो अब तुम्हारी हैसियत मजदूर की हो जायगी! अब तुम्हें कर्ज कौन देगा ? व्यापारी-साहूकार भी अपना कर्ज अदा करवाने के लिए पीछे पड़ जाते हैं। इस तरह ग्रामदान होते हुए, वहाँके लोगों ने मानो कोई पाप कर लिया हो, वैसे लोग उनके पीछे पड़ जाते हैं। ऐसी परिस्थिति में आप लोग उन्हें आवश्यक रूप से समझा सकते हैं कि 'ग्रामदान' किया तो बहुत अच्छा किया। अब जमीन अलग-अलग बाँटनी है तो अलग-अलग बाँटो और साथ रखनी है तो साथ रखो, सहकारी कृषि करो। मान लो, अलग-अलग बाँटना ही चाहते हो तो थोड़ी जमीन सामूहिक कृषि के लिए रखो।

सभी लोग मिलकर रहो। मिलकर रहने से ही अपनी शक्ति बढ़ती है। आज गाँव-गाँव में फूट पड़ी हुई है, सभी तरफ दल-बंदी हो रही है। ऐसी स्थिति में आप लोगों ने दलबंदी से ऊपर उठकर एक मति से ग्रामदान का जो निर्णय किया है, वह बहुत महत्त्वपूर्ण कदम है। राष्ट्र में ऐसे ही महत्त्वपूर्ण निर्णय होंगे, गाँव-गाँववाले एक होंगे, सभी मिलकर योजना बनायेंगे, तभी हमारे देश में वास्तविक आजादी आयेगी। आजादी को पानेवाले ग्रामदानी गाँवों के लोग मजदूर नहीं, मालिक होंगे, सभी मालिक!

यहाँकी सरकार ने तो मुझे यहाँ तक कहा है कि ग्रामदानी गाँवों में जो सरकारी जमीन होगी, वह भूमिहीनों में वितरित कर देंगे। मैं यह बात लोगों को नहीं कहता हूँ। क्योंकि मेरा काम लोक-शक्ति बढ़ाने का है। इसलिए आपसे कहता हूँ कि आप लोग ग्रामदानी ग्रामवालों को विश्वस्त कीजिये और उन्हें बताइये कि 'अब डरने या दबने की कोई बात नहीं है। जब व्यक्तिगत मालकियत थी, तब बचाव का साधन था तो आज उससे भी अधिक बचाव के साधन उपलब्ध हो गये हैं। अब आपको सरकारी मदद भी मिल सकती है।'

पहले आपको ग्रामदानी गाँवों में निर्भयता पैदा करने का प्रयत्न करना जाहिए, फिर ग्रामोद्योग आदि क्षेत्रों में उन्हें मदद पहुँचानी चाहिए।

शिक्षा और सहकार

प्रश्न :—क्या अशिक्षित ग्रामीणों के लिए आज की सहकारी संस्थाएँ उपयोगी हो सकती हैं और क्या वे अशिक्षित लोग उनमें सम्मिलित होना पसन्द करेंगे ?

विनोबाजी :—शिक्षित-अशिक्षित का सवाल नहीं है। मुझे जहाँ तक ज्ञात है, वहाँ तक सहकारी संस्थाओं में शिक्षितों का ही सहकार कम मिलता है। जहाँ शिक्षित लोग अधिक हैं, वहाँ सहकारी संस्थाओं का संचालन बहुत मुश्किल से हो रहा है और जहाँ अशिक्षित लोग हैं, वहाँ वे लोग हरि का नाम लेकर सहकारी संस्थाओं में सम्मिलित हो जाते हैं। आज का शिक्षण बेकार है। अब शिक्षित होना गौरव नहीं, बल्कि अगौरव है। शिक्षित व्यक्ति ने क्या सीखा ? द्रव्य का लोभ, बिना काम किये अच्छे-से-अच्छा खाने की लालसा, आलस्य और दुर्व्यसन। इसलिए सहकारी संस्थाओं में सम्मिलित होने के वास्ते शिक्षित-अशिक्षित का सवाल ही नहीं रह गया है।

हिन्दुस्तान में दो चुनाव हुए हैं। दुनिया के लोगों को विश्वास नहीं था कि हमारे यहाँके अशिक्षित माने जानेवाले लोग इतनी अच्छी तरह से मतदान करेंगे! हमारे यहाँके लोग पढ़े-लिखे न होने के बावजूद शिक्षित हैं। दस हजार साल से संस्कारित हैं, संगठित हैं, इसलिए उनके सामने सहकारी संस्था का सवाल टेढ़ा नहीं है। वे सहकारी संस्थाओं में आसानी से सम्मिलित हो सकते हैं। लेकिन मैं कहना चाहता हूँ कि आज की सहकारी संस्थाएँ बड़ी खतरनाक हैं। उनमें तरह-तरह के कानूनी पचड़े हैं। उन कानूनों से देहातवालों को परिचित कौन करायेगा ? सहकार अच्छा है, किन्तु सहकार के नाम पर लोगों को जकड़ लेना अच्छा नहीं है। सबको सुविधाएँ हों, विकास करने के लिए सबको समान अवसर हो तो हिन्दुस्तान में सहकारी संस्थाएँ बन सकती हैं और उनके लिए देहातवाले अधिक-से-अधिक अनुकूल भी हो सकते हैं। उनमें समझदारी की कमी नहीं है।

कानून किसके लिए ?

प्रश्न :— नागरिकों के चरित्र-निर्माण में कानून का उपयोग कहाँ तक कर सकते हैं ?

विनोबाजी :— बहुत अच्छा उपयोग कर सकते हैं। कानून को बेकार बनाने की कोशिश न की जाय। सरकार और जनता कानून का अच्छे-से-अच्छा उपयोग करे तो कानून अच्छा चलेगा! मान लो, यदि कोई रिश्वत लेता है तो वह चरित्रभ्रष्ट करता है। चारित्र्य के विरुद्ध कानून का अस्तित्व नहीं होता। कानून जन-जीवन की सुरक्षा तथा उन्नति के लिए बनाये जाते हैं। यदि वे गलती से वैसे न बन पायें तो हमें चाहिए कि तात्कालिक कानूनों में आमूल परिवर्तन कर दें। चारित्र्य-निर्माण केवल कानून से नहीं होता है।

दुनिया में तीन प्रकार के लोग हैं। एक तो वे, जो कानून हो या न हो, हर हालत में सदाचरणशील ही रहेंगे। दूसरे वे, जो चाहे जितने ही कानून बनाइये, हमेशा उनकी अवगणना करते हुए खराब ही रहनेवाले हैं और तीसरे वे लोग हैं, जो कानून के कारण अच्छे रहते हैं, किन्तु कानून न हो तो बुरे बन जाते हैं। इसलिए कानून का उपयोग शिष्ट लोगों के लिए नहीं है और अशिष्ट लोगों के लिए भी नहीं है। विशिष्ट लोगों के लिए है। कानून को केवल दंड पर आधारित नहीं होना चाहिए।

दुनिया में जो सज्जन पुरुष हैं, उनका मुकाबला दुर्जनों के साथ करवाना चाहिए। जिनकी गिनती न सज्जनों में होती है, न दुर्जनों में होती है, वे सामान्य जन हैं। कानून उनके लिए है। वे कानून के पाबन्द रहेंगे। कानून अच्छा रहा तो वे अच्छे रहेंगे और कानून खराब रहा तो वे खराब रहेंगे। जो दुर्जन हैं, उनपर सरकार का ज्यादा आक्रमण न हो। उन्हें सत्संगति सुलभ करवाई जाय। भजन-मंडली, कीर्तन-मंडली व उपदेश-मंडली में रहने से उनके अन्तःकरणों में सद्भावनाएँ उद्बुद्ध होंगी। जो सज्जन हों, उन्हें वेतन दिया जाय, ऐसा भी नहीं होना चाहिए। सज्जनों को इज्जत देना ही पर्याप्त है। पुराने राजा यही करते थे। वे समझते थे कि दुनिया में दुर्जनों को सुधारने का काम सज्जन ही कर सकते हैं। कानून से दंड हो सकता है, सुधार नहीं। इसलिए सज्जनों के सहयोग से समाज-रचना में स्वस्थता लाने का प्रयत्न होना चाहिए।

सहकारी कृषि लादी न जाय

प्रश्न :— प्रत्येक भारतीय को संपत्ति तथा मुक्ति के साथ विशेष आसक्ति होती है, इसलिए भारत में सामूहिक कृषि कहाँ तक सफल हो सकती है ?

विनोबाजी :– सामूहिक कृषि का अगर यह अर्थ है कि लोग मजदूर बन जायँ तो वह न हिन्दुस्तान के लिए उपयोगी है और न विश्व के लिए ही अच्छी है। सामूहिक कृषि याने सब लोग एक-दूसरे की मदद करें। काम अपने आप सहयोग पूर्वक करें। मालिकी के साथ अभिक्रम जुड़ा हुआ है, यह सही नहीं है। घर में पाँच-सात मनुष्य होते हैं तो क्या वे अलग-अलग मालिक होते हैं? सभी घर के लिए काम करते हैं, वैसे ही वे लोग गाँव के लिए काम करेंगे।

मैं सामूहिक कृषि का आग्रही नहीं हूँ। सब लोग मिलकर योजना बनायें, उसे क्रियान्वित किया जाय। कोई भी चीज लादी न जानी चाहिए। लादी हुई चीज अच्छी होते हुए भी खराब परिणाम लाती है, इसलिए आरम्भ में बड़ी, नहीं तो छोटी-छोटी सहकारी समितियाँ बनाई जायँ। जो लोग सहकारी समिति में सम्मिलित नहीं होते, वे कोई गलती करते हैं, ऐसा भी न माना जाय। इसलिए सहकारी समिति (कोऑपरेटिव) तथा सामूहिक कृषि (कलेक्टिव फार्मिंग) का आग्रह न रखा जाय। मार्केटिंग में, पानी की सिंचाई में, रात को जागने में सहकार किया जा सकता है। बाकी सब खेत एक हो जायँ, ऐसी अपेक्षा नहीं रखनी चाहिए। सर्विस कोऑपरेटिव बने तो किसीको आपत्ति नहीं होगी। ऐसे ही हिन्दुस्तान में बहुत सहकार होता है। दो किसानों के पास एक-एक बैल होता है तो वे मिलकर ही खेती करते हैं। सरकारी मदद के बिना ही हजारों वर्षों से ऐसा होता आया है।

हमारे गाँववाले सारा काम करते हुए भी उसे सुव्यवस्थित करना नहीं जानते हैं। उसका मुख्य कारण है—हिसाबी ज्ञान का अभाव! लिखना गौण है, हिसाब जानना महत्त्व का है।

स्कूलों में पहले गणित सिखाना चाहिए, बाद में पढ़ना, लिखना। दस+पद्रह=पचीस–इस तरह से बच्चे पहले गणित सीख जायँ। आज हिन्दुस्तान में ऐसे अनेकों किसान हैं, जो बीस से अधिक गिनना नहीं जानते हैं। चालीस गिनना हो तो दो बीसा कहते हैं। सौ तक गिनना तो आता ही नहीं है। इसलिए किसानों को पढ़ना-लिखना सिखाने से पूर्व गणित सिखा देना आवश्यक है। ऐसा होने से ही कोऑपरेटिव में सहूलियत होगी।

सम्पत्ति की आसक्ति भारतीय मनुष्यों में बहुत ज्यादा होती है, यह गलत बात है। मालिकी हक छोड़ने के लिए भारतीय मनुष्य जितनी जल्दी तैयार होता है, उतना जल्दी शायद ही किसी अन्य राष्ट्र का मनुष्य तैयार होगा। यहाँ भूमि के लिए अवश्य प्रीति है, इसका भूदान-यात्रा में मुझे कई बार अनुभव आया है। इतने से समय में छह लाख दाताओं द्वारा मुझे लगभग ४५ लाख एकड़ जमीन दान में मिली है। इससे क्या जाहिर होता है? यदि मुझे यथेष्ट कार्यकर्ता मिल जायँ तो मेरी पाँच करोड़ की माँग भी पूरी हो सकती है। पचपन लाख सरकारी सेवक हैं, किन्तु लोक-सेवक कितने हैं?

तिलक की आकांक्षा...!

लोकमान्य तिलक जब जेल में थे, तब उनसे पूछा गया कि स्वराज्य-प्राप्ति के बाद आप किस विभाग के मन्त्री बनेंगे? उन्होंने कहा कि फिर राजनीति में रह क्या जायगा—जिसके लिए रहना आवश्यक हो? मैं अभी मातृभूमि की मुक्ति के लिए राजनीति में हूँ। आजादी प्राप्त होने के बाद या तो मैं वेदों का संशोधन करूँगा या गणित का प्रोफेसर बनूँगा। लोकमान्य आज के राजनैतिक लोगों की भाँति सत्ता के पीछे पागल बननेवाले बुद्धू नहीं थे। वे यह भलीभाँति जानते थे कि स्वराज्य-प्राप्ति के बाद किस क्षेत्र में इज्जत होगी! स्वराज्य-प्राप्ति से पूर्व राजनैतिक क्षेत्र में त्याग था, जेल भुगतनी पड़ती थी, सरकारी अकृपा सहनी पड़ती थी। इसलिए इज्जत थी, लेकिन अब राजनैतिक क्षेत्रवालों को कौन-सा त्याग करना पड़ता है? स्वराज्य प्राप्ति के बाद इज्जत का क्षेत्र ही बदल गया है। अभी स्वराज्य चलाने के लिए कुछ लोगों को सरकार में जाना पड़ता है, परन्तु वहाँ त्याग का अवसर नहीं है। इसलिए उन्हें समझ-बूझकर, वैसे ही त्याग करना चाहिए, जैसे भरत करता था। रामचन्द्र की अनुपस्थिति में अयोध्या से बाहर रहकर ही भरत ने राज्य चलाया और वहाँ तपस्या की। तुलसीदासजी लिखते हैं कि चौदह वर्षों के पश्चात् जब रामचन्द्रजी वापस लौटे तो यह निर्णय करना कठिन हो गया कि कौन राम है और कौन भरत!

इस तरह साधारण रीति से जहाँ त्याग नहीं होता है, वहाँ भी कृत्रिम रीति से त्याग तो करना ही पड़ता है। क्योंकि वह भी एक कर्तव्य तो है ही। खैर, चन्द लोगों को वहाँ काम करना ही चाहिए, किन्तु बाकी समस्त कार्यकर्ता सतत राजनीति का ही चिन्तन करें, इलेक्शन के अतिरिक्त कुछ सोचें ही नहीं तो उनसे बढ़कर बुद्धू किसे कहा जायगा? मैं कहना चाहता हूँ कि आज अगर काफी तादाद में सेवक मिल जायँ तो भूदान का काम काफी तेजी से हो सकता है।

मैं जमीन के प्रति रहे हुए प्रेम को और बढ़ाना चाहता हूँ, ताकि हर मनुष्य को जमीन की सेवा करने का सौभाग्य प्राप्त कर सके। सभीको जमीन दिलवाना हमारा धर्म है। लोगों को आसक्ति मालिकी की नहीं है, मालिकी तो ऊपर से कानून के जरिये लादी गयी है। उसके इतिहास में मैं अभी नहीं पड़ूँगा। सामूहिक कृषि जबर्दस्ती मजदूर बनाने का अभियान नहीं है। दो-दो, चार-चार किसान मिलकर एक हो सकते हैं। स्वेच्छा से सम्मिलित होने से समूहिक कृषि खूब ही अच्छे ढंग से सफल होगी।

व्यक्तिवाद नहीं टिक सकता

भारतवर्ष में साथ-साथ काम करने की पद्धति बहुत प्राचीन समय से चली आ रही है। आधुनिक समय में वह थोड़ी-बहुत खंडित हुई है, लेकिन इस विज्ञान-युग में मनुष्य को फिर से सामूहिकता का महत्त्व स्वीकार करना होगा। यदि अब एक-एक मनुष्य अपना स्वार्थ सोचता रहेगा तो कोई काम नहीं हो सकेगा। सभी मिलकर सभीके हितों के बारे में सोचेंगे, तभी सबका कल्याण होनेवाला है।

जब सब लोग सबके हितों को प्रधानता देते हैं तो साथ काम करना शुरू करना ही होगा। सामूहिकता में अनेक प्रकार के लाभ हैं। लेकिन पिछली सदियों में हमारा देश गुलाम बना रहा है, इससे हम उसका महत्त्व भूल गये हैं। उसी सबब से हमारे यहाँ व्यक्तिगत स्वार्थ की भावनाएँ बढ़ी हैं और अनेक प्रकार के अन्य दोष भी प्रकट हुए हैं, लेकिन अब वे भावनाएँ और दोष मिटनेवाले हैं। हमारे यहाँके सभी धर्मों ने स्वार्थ-भावनाओं को त्याज्य बतलाया है, इसलिए व्यक्तिवाद की बुनियाद नहीं जम सकती।

व्यक्तिवाद के निराकरण के साथ ही सामूहिक जीवन की शुरूआत नहीं होती है। उसके लिए भी स्वतन्त्र अभिक्रम करना होगा। हम विचार-प्रचार के जरिये और कर ही क्या रहे हैं?

●●●

प्रार्थना-प्रवचन

सतलासणा (महेसाणा) ५-१-'५९

ग्राम-स्वराज्य-दर्शन

आज इस क्षेत्र में एक ग्रामदान हुआ है, यह बहुत अच्छी बात है। मैं चाहता हूँ कि इस क्षेत्र के अन्तर्गत जितने गाँव हैं, उन सबका ग्रामदान हो जाय। ग्रामदान-आन्दोलन आप लोगों को नया-नया सा मालूम होता है, लेकिन यह नया नहीं है, बहुत पुराना है। आप जानते ही हैं कि पहले जमीन पर व्यक्तिगत अधिकार नहीं था। पिछले सौ वर्षों से ही भूमि पर मालिकी, हक स्थापित करने की परम्परा बनी है। पहले जमीन व्यक्ति की नहीं होती थी, गाँव की होती थी। गाँव में रहनेवाले सभी लोगों का इसपर अधिकार होता था। कृषक खेती का काम करते थे तो बढ़ई लकड़ी बनाने का काम। लोहार औजार बनाने का काम करते थे तो अन्य लोग आवश्यक सहयोग देते थे। फसल आने पर सभी किसीको यथेष्ट हिस्सा मिल जाता था। काम करनेवाले लोग अपने काम का मूल्य रुपयों में नहीं, फसल में पाते थे। फसल अच्छी होने पर सभी किसीको 'भर-भर' कर मिलता था और फसल खराब हो जाने पर सभीके पल्ले 'कम-कम' पड़ता था। फसल कम होने पर न तो काम में कमी होती थी और न ज्यादा होने पर ही काम का दबाव होता था। उस समय ग्रामवासी एक-दूसरे के सुख-दुःख में हाथ बँटाते और प्रेम से रहते थे।

ग्राम-सभा का उत्तरदायित्व

ग्रामदान हो जाने के बाद भी और क्या होगा? सभी एक-दूसरे के सुख-दुःखों में साथ देंगे, गाँव की जमीन सबकी कर देंगे, गाँवों में उद्योग खड़े करेंगे, सभीके पालन-पोषण तथा रक्षण की चिन्ता करेंगे। प्राचीन युग में ग्राम-सभा पर ही गाँव का उत्तरदायित्व था। कोई भूखा हो तो ग्राम-सभावालों को उसे खाना या काम देना पड़ता था। वही काम ग्रामदान के बाद स्थापित की जानेवाली ग्राम-सभाओं का होगा।

आज पंचायतें गठित करने पर शक्ति लगायी जा रही है। ये पंचायतें ग्राम की समस्याएँ मिटाने की जगह और अधिक बढ़ा रही हैं। जिन गाँवों में पहले फूट नहीं थी, दलबन्दी नहीं थी, उन गाँवों में आज पंचायतों के कारण फूट पड़ गयी है। गाँववाले एक-दूसरे के खिलाफ लड़ रहे हैं—यह सब क्या है? फूट के बल पर गाँवों को कितने दिनों तक टिकाये रख सकेंगे? इस फूट को मिटाने के लिए ग्राम-सभा को अपना दायित्व समझना होगा।

आज गाँवों में तीन तरह के लोग रह रहे हैं। कुछ मालिक हैं, कुछ मजदूर हैं और कुछ कारीगर हैं। तीनों में फूट! मैं चाहता हूँ कि तीनों की फूट मिटे, एक-दूसरे को मदद करें। मदद करने से ग्रामदान हो जाता है। ग्रामदान में गाँव की जमीन पर सभीका समान अधिकार रहने से अभीके लड़कों को समान शिक्षा-दीक्षा मिल सकती है। सभीको समान पोषण मिलना चाहिए।

ग्रामदान के संदर्भ में बड़े-बड़े जमीनवाले अपने हिस्से का त्याग करते हैं तो छोटे लोग भी यही कहते हैं कि आपने हमारे लिए इतना त्याग किया तो हम भी आपको किसी तरह का कष्ट नहीं होने देंगे। ग्रामदान छोटे-बड़े सभी को अभयदान देता है। राजाओं ने अपना राज छोड़ दिया तो उन्होंने क्या खो दिया? उनका गुजारा चल रहा है या नहीं? पहले से अधिक ही प्रतिष्ठा उन्हें मिली एवं मिल रही है। कृष्णार्पण की हुई वस्तु क्या वापस नहीं मिलती? मिलती है, पर प्रसाद के रूप में।

ग्रामदान के बाद

पैदावार बढ़ाई जाय। खाद का सुन्दर उपयोग किया जाय। गो-पालन की व्यवस्था हो। गायों की जितनी सेवा की जायगी, उतना ही घी, दूध, दही, मक्खन पैदा होगा। सभीको मक्खन मिले। गाँव का दूध, घी, मक्खन आदि पैसों के लिए नगर में बिकने नहीं जाना चाहिए। पैसे के पीछे बच्चे के जीवन को उपेक्षित करना एकदम गलत बात है। बच्चे मजबूत न होंगे तो खेती कौन करेगा? बैल मजबूत न होंगे तो हल कौन जोतेगा? गाँव का कोई भी बच्चा मक्खन के लिए मुहताज न रहे। बैलों की भी हर संभव तरीकों से रक्षा करनी चाहिए। बैल जितने अच्छे होंगे, खेती उतनी ही अच्छी होगी।

गाँव में कपास पैदा कर उसका कपड़ा भी वहीं तैयार करना चाहिए। जिस तरह राष्ट्रीय आजादी के लिए विदेशी वस्त्रों का बहिष्कार किया गया था, उसी तरह ग्राम-स्वराज्य के लिए बाहरी वस्त्रों का भी बहिष्कार करना चाहिए। कताई, बुनाई, धुनाई से कइयों को उद्योग मिल जायँगे।

गाँव में गन्ने पैदा हों तो उसका गुड़ भी वहीं बनना चाहिए। तिल का तेल भी बाहर से क्यों खरीदा जाय? गाँव में तिल, सरसों आदि उत्पन्न हो तो वहीं उसका तेल पेर लेना चाहिए। दैनंदिन जरूरतों के बारे में जितना स्वावलम्बन हो सके, उतना साध लेना ही प्रथम कर्तव्य है।

ग्रामदानी गाँव में व्यसन नहीं होने चाहिए। आज गाँव-गाँव में बीड़ी, सिगरेट के व्यसन तेजी से बढ़ रहे हैं। इससे कितने रोग होते हैं? खाँसते-खाँसते दम निकलने लगता है। बेकार रुपया फूँकना और आरोग्य से हाथ धोना, ऐसे धन्धे करने की क्या आवश्यकता है? व्यसन छोड़ने की बात स्त्रियों से सीखनी चाहिए। उन्हें कोई व्यसन नहीं रहता। वे व्यसनों के बिना रह सकती हैं या नहीं? फिर पुरुष कैसे नहीं रह सकते? स्त्रियों का कर्तव्य है कि वे पुरुषों से प्रेमपूर्वक व्यसन छुड़वायें।

ग्रामदान में कर्ज की कोई बात ही नहीं रहती। किसीको अपने लड़के-लड़की की शादी करनी हो तो वह गाँव के सभी लोग मिलकर करें। वह गाँव का सार्वजनिक उत्सव माना जाय।

गाँववालों को चाहिए कि ग्रामदान के बाद सूक्ष्म बुद्धि का उपयोग करें। शहरों में किताबी ज्ञान रहता है, पर देहातों में अनुभवजन्य प्रायोगिक ज्ञान रहता है। ग्रामदानी गाँववाले लोग आज मुझसे मिलने आये थे। मैंने उनमें से पढ़े-लिखे लोगों से पूछा कि आप लोग अपने गाँव की ज्ञान-वृद्धि के लिए क्या करते हैं? कुछ नहीं। मैंने उनसे कहा कि गाँव में एक विद्वान होना चाहिए, जो संध्या समय सबको एकत्रित कर ज्ञानवर्द्धक पुस्तकें पढ़कर सुनाये, बाहरी खबरें बताये एवं महापुरुषों की जीवनी सुनाये। प्रतिदिन संध्या समय सभीको घण्टा-डेढ़ घण्टा पढ़ाये। सुबह बच्चों को पढ़ाये। स्वयं पढ़े और दो-तीन घण्टे कृषकों के साथ खेत में काम भी करे।

आज तो गाँवों से अच्छे-अच्छे बुद्धिमान और श्रम-शक्ति सम्पन्न लोग शहरों की ओर भाग रहे हैं। इससे गाँवों की तरक्की नहीं हो रही है। नित्य ज्ञान-वृद्धि करते रहने से गाँवों का विकास हो सकता है, इसलिए गाँवों में इस तरह की अनुकूल योजना करनी चाहिए। ज्ञान बिना ही रह गये तो मानव ने क्या कमाया? गाँवों में दूध जरूरी है, और ज्ञान भी। शरीर के लिए दूध है और आत्मा के लिए ज्ञान। ●●●

जिला-कार्यकर्ताओं के साथ सतलासणा (महेसाणा) ५-१-'५९

कठिन से कठिन समय में भी जन-सेवा से पराङ्मुख न हों !

अभी मेरा ध्यान यहाँ रखे हुए दो चित्रों की ओर आकृष्ट हुआ है। एक चित्र है शिवाजी महाराज का और दूसरा चित्र है राणाप्रताप का। शिवाजी के हाथ में तलवार है, जिसे उन्हें भवानी ने प्रदान किया था। कहा जाता है कि इसी कारण वे सर्वत्र विजयी हुए। राणाप्रताप के पास एक म्यान में दो तलवारें हैं। किन्तु अब वैज्ञानिक युग में इन तलवारों का क्या मूल्य रह गया है ? राणाप्रताप और शिवाजी कठिन से कठिन परिस्थितियों में भी जनसेवा से पराङ्मुख नहीं हुए। वैसे ही अगर आज हमें उनका आदर्श स्वीकार्य है तो हमारा कर्तव्य है कि हम किसी भी हालत में लोक-सेवा के आदर्श से पराङ्मुख न हों।

कार्यकर्ताओं से

हमारे राजा-महाराजाओं ने बड़ी ही बुद्धिमानी और सद्भावनाओं के साथ अपने-अपने राज्य त्याग दिये। अब उन्हें जो मिलता है, उसीमें वे सन्तुष्ट हैं। उन्हें आजीविका की भी चिन्ता नहीं है। फिर भी अभी वे पक्ष-मुक्ति के भावों से ओत-प्रोत नहीं हैं। यदि राजा लोग पक्ष-मुक्त होते तो उनकी जितनी प्रतिष्ठा है, उससे शतगुणित प्रतिष्ठा उन्हें मिल जाती। न जाने वे लोग ऐसा क्यों नहीं सोच पाते ! बिहार में मुझे कई राजाओं ने सहयोग दिया। मैं चाहता हूँ कि यहाँके राजा भी मुझे सहयोग करें।

आपमें से कुछ लोग शान्ति-सैनिक बने हैं। वे पूरा समय और अपना समस्त चिंतन अहिंसक समाज-रचना के लिए देंगे। कुछ लोग शान्ति-सहायक बने हैं, वे अपना पूरा समय नहीं दे सकेंगे। उनकी परिस्थितियाँ पूरा समय देने के अनुकूल नहीं हैं। अतः हमें ऐसी योजना करनी चाहिए, ताकि सभी शान्ति-सैनिक बन सकें और सभी पूरा समय दे सकें। आपके यहाँके रावसाहब भी शान्ति-सैनिक क्यों न बनें ? आप अच्छी योजना एवं अनुकूलता करिये।

सरकारी कर्मचारी भी अपने आपको निष्पक्ष समाज के सदस्य मानें। पंचायत के लोग, शिक्षक, छात्र आदि सभी हमारी ही जमात के हैं। हम सभी लोग पक्षातीत समाज की स्थापना कर राष्ट्र को शोषण-मुक्ति के पथ पर अग्रसर कर सकते हैं। इसलिए आप सभी लोगों से सहयोग प्राप्त कीजिये। वे अवश्य ही सक्रिय सहयोग देंगे।

विद्यालयों में वर्ष भर कितनी छुट्टियाँ होती हैं ? उस अवकाश के समय सारे शिक्षक और छात्र आपकी योजना घर-घर तक पहुँचाने का काम कर सकते हैं। आप उस समय सुनियोजित ढंग से सर्वोदय-पात्र योजना चलाइये।

सरकारी कर्मचारियों से आप कहिये कि 'बाबा ने आपसे संपत्तिदान माँगा है, उसपर आपने क्या निर्णय किया है ? आप लोग नियमित सम्पत्तिदान दें।' आप उन्हें इस प्रकार कहेंगे तो कई लोग संपत्तिदान अवश्य देंगे। उनमें से कुछ 'बोगस' भी निकल सकते हैं।

जो लोग हमें संपत्तिदान दें, उसका उपयोग हम साहित्य-प्रचार में करें। दुखायलजी, दातारामजी जैसे सेवक यह काम शहरों में भी कर रहे हैं ! शहरों में साहित्य-प्रचार का काम खूब हो सकता है। चालीस लाख के गुजरात में 'भूमि-पुत्र' जैसे अखबार के सिर्फ १७।१८ हजार ग्राहक होना कितना कम है ? सरकार के पास प्रेम-पूर्वक कार्य करने का सामर्थ्य नहीं है। यह कार्य तो जन-सेवकों से ही संभव है। सरकार के पास 'वोट' के सिवाय कोई शक्ति नहीं है। वह टैक्स के आधार पर ही दवाखाना खोल सकती है, नये-नये विद्यालय खड़े कर सकती है, परन्तु हम लोग जनता की आत्मशक्तियों को जागृत करें तो अपने उद्देश्य में सफल रहेंगे। फिर कहीं भी हमें किसी प्रकार की सहायता के लिए मुहताज नहीं रहना पड़ेगा। आप जहाँ भी जायँगे, वहाँ अकल्पित सहायता उपलब्ध होगी।

मैंने यहाँ तीन सौ कार्यकर्ताओं की माँग रखी है। क्या पन्द्रह लाख की बस्ती के लिए इसे आप अधिक कहेंगे ? भले सब लोग शान्ति-सैनिक न बनें, पर हमारे कार्य के लिए तो पूरा समय दें।

गुजरात के गुण अभिव्यक्त हों

मेरी गुजरात-यात्रा अब पूरी होने जा रही है। मुझे लगता है कि मेरी यह यात्रा सफल रही। आप लोगों को अनुभूति हो या न हो, किन्तु मुझे इस यात्रा से अपनी शक्ति-वृद्धि का अनुभव हुआ है। अपने यात्रा-काल में मैंने बहुत सी शंकाओं का निरसन किया है। मुझे गुजरात में आने की आवश्यकता ही नहीं प्रतीत होती थी, लेकिन यह अच्छा ही हुआ कि इधर आना हो गया। इससे विचारों की काफी सफाई हो गयी है। अब सिर्फ योजना करने का काम बचा है, वह काम यदि गुजरात में नहीं होगा तो भारत में कहीं भी नहीं होगा। गुजरात में योजना-शक्ति का विशेष गुण है। वह गुण अब प्रगट होना चाहिए। अतः अब आप लोग सर्वोदय-पात्र, संपत्ति-दान आदि के लिए सभी प्रकार से सम्यक् योजनाएँ तैयार कर उन्हें क्रियान्वित करने का दृढ़ संकल्प करेंगे, ऐसा मुझे पूर्ण विश्वास है।

यह सारी योजना सेवा की योजना है। जानवर भी अपना पेट पालते हैं और हम भी सिर्फ अपना ही पेट पालते रहें तो मानवता का मौलिक रूप क्या रह जायगा ? सेवा के जरिये हमें मानवता को अभिव्यक्ति देने का अवसर मिला है। इस अवसर से हम पूरा लाभ उठायें और मरते दम तक सेवा-धर्म से विचलित न हों।

● ● ●

अनुक्रम

१. मीरा के जीवन की अदम्य प्रेरणा
चित्तौड़गढ़ ९ फरवरी '५९ पृ० १७७
२. राष्ट्र-विकास के सिद्धान्तों की सही समझ
गोसंबा ७ फरवरी '५९ ,, १७९
३. ग्राम-स्वराज्य-दर्शन
सतलासणा ५ जनवरी '५९ ,, १८३
४. कठिन से कठिन समय में भी जनसेवा से पराङ्मुख न हों
सतलासणा ५ जनवरी '५९ ,, १८४

श्रीकृष्णदत्त भट्ट, अ० भा० सर्व-सेवा-संघ-प्रकाशन, राजघाट, काशी द्वारा भार्गव भूषण प्रेस, वाराणसी में सम्पादित, मुद्रित और प्रकाशित
फोन : १२८५ तार—प्रकाशन, राजघाट, काशी।